श्रीसोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालयग्रन्थमाला - १६

भारतीयदर्शनसिद्धान्तप्रभा

प्रधानसम्पादकः

प्रो. गोपबन्धुमिश्रः

कुलपतिः

श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी, वेरावलम्

सम्पादिका

डॉ. बी. उमामहेश्वरी

सहायिकाचार्या

श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी, वेरावलम्,

श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी-वेरावलम्- गुजरातम्

श्रीसोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालयग्रन्थमाला - १६

भारतीयदर्शनसिद्धान्तप्रभा

प्रधानसम्पादकः

प्रो. गोपबन्धुमिश्रः

कुलपतिः

श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी, वेरावलम्

सम्पादिका

डॉ. बी. उमामहेश्वरी

सहायिकाचार्या

श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी, वेरावलम्,

श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी-वेरावलम्- गुजरातम्

I

प्रकाशकः -

डॉ. दशरथजादवः
कुलसचिवः
श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी,
राजेन्द्रभुवन रोड, वेरावलम् - ३६२ २६६
गीर-सोमनाथजनपदम्, गुजरातराज्यम्
दूरभाषः - ०२८७६ - २४४५३२, फेक्सः २४४४१७
E-mail: sssu.veraval@gmail.com
Web: www.sssu.ac.in

सहायकसम्पादकः समन्वयकश्च

डॉ. कार्तिकपण्ड्या
संशोधनाधिकारी,
श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी, वेरावलम्

© Shree Somnath Sanskrit University, 2020

संस्करणम् - प्रथमम्

वर्षम् - मार्च -२०२०

प्रतिकृतयः - ३५०

ISBN - 978-93-83097-35-7

मूल्यम् - ₹५१०/-

मुद्रकः - जलाराम ग्राफिक्स एन्ड ऑफसेट
परमहंस एपार्टमेन्ट के पास, होटेल कावेरी के पीछे,
एस. टी. रोड, वेरावल-३६२ २६६,
जि. गीर-सोमनाथ, गुजरात (भारत)
दूरभाष - ०२८७६-२२१८६१

Shree Somnath Sanskrit University Grantha Series - 16

BHĀRATĪYADARŚANASIDDHĀNTAPRABHĀ

Chief Editor
Prof. Gopabandhu Mishra
Vice-Chancellor
Shree Somnath Sanskrit University
Veraval

Editor
Dr. B. Uma Maheswari
Assistant Professor
Shree Somnath Sanskrit University
Veraval

Shree Somnath Sanskrit University - Veraval - Gujarat

Published by:

Dr. Dashrath Jadav
Registrar
Shree Somnath Sanskrit University
Rajendra Bhuvan Road, Veraval - 362 266.
Dist.: Gir-Somnath, Gujarat, India.
Phone: 02876-244532, Fax: 02876-244417
E-mail: sssu.veraval@gmail.com
www.sssu.ac.in

Assistant Editor & Co-ordinator:
Dr. Kartik Pandya
Research Officer
Shree Somnath Sanskrit University, Veraval.

© Shree Somnath Sanskrit University, 2020

All rights reserved. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopying, recording or otherwise, without the written permission from the publisher.

Edition : First

Year : March - 2020

Copies : 350

Price : ₹510/-

ISBN : 978-93-83097-35-7

Printed by : Jalaram Graphics & Offset
Nr. Paramhans Appartment, B/h. Hotel Kaveri
S. T. Road, Veraval - 362 266
Dist.: Gir-Somnath, Gujarat, India.
Phone: 02876-221861

भारतीय दार्शनिक विचारों के परिप्रेक्ष्य में आनंदसागर में सृष्टिप्रक्रिया की प्रायोजना

डॉ. ललित पटेल
असोसिएट प्रोफेसर,
श्री सोमनाथ संस्कृत विश्व विद्यालय, वेरावल।

सारांश -

भारतीय संस्कृत साहित्य में वैदिक साहित्य से शुरु करके अद्यावपि सृष्टिप्रक्रिया विषयक चिंतन किया गया है। वेदों के नासदीय जैसे दार्शनिक सूक्तों में, पुराणों में, भारतीय दर्शनशास्त्रों में एवं नानाविध सांप्रदायिक ग्रन्थों में सृष्टिप्रक्रिया का निरूपण पाया जाता है। विविध भारतीय दार्शनिक विचारों के परिप्रेक्ष्य में पंडित श्रीकृष्णमणि प्रणीत आनंदसागर नामक ग्रन्थ में जो सृष्टिप्रक्रिया का निरूपण किया गया है, उसकी प्रायोजना यहाँ प्रस्तुत की गई है।

वेदों के सृष्टि विषयक विचार, पौराणिक सर्गप्रक्रिया एवं दर्शनशास्त्रों की संसार प्रक्रिया का विचार करते हुए आनंदसागर के सृष्टि प्रपंच की प्रायोजना समझने का यहाँ प्रयोजन है। सृष्टिप्रक्रिया की इस प्रायोजना को समझने के लिए समीक्षात्मक, विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक पद्धति का आश्रय किया गया है।

वेदों में सृष्टिप्रपंच

ऋग्वेद के दशवें मंडल के कुछ सूक्त ऐसे हैं कि जिसमें सृष्टि की उत्पत्ति विषयक ब्योरा देखने को मिलता है जिसमें **पुरुषसूक्त** (१०-९०) में आदि

पुरुष के शरीर में से देवताओं द्वारा सृष्टि का निर्माण दर्शाया गयाहै। सृष्टि रचना की प्रक्रिया को यज्ञ का रूप दिया गया है। कुछ परिवर्तन के साथ यह सूक्त शुक्ल यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद में भी मिलता है। पुरुष का वर्णन करते हुए, उसको सहस्र मस्तक वाला, सहस्र आंखोवाला एवं असंख्य पाँववाला कहा गया है। वह संपूर्ण भूमंडल में व्याप्त हुए दश अंगुलि ज्यादा रहा हुआ है।[१] यह पुरुष सर्वव्यापी ईश्वर है। वह जीवों के सभी कलापों का निरीक्षण करता हुआ उनकों कर्मफल प्रदान भी करता है। यह विराट पुरुष का एक चौथाई हिस्सा माया से उपहित बनकर जन्म-मृत्यु के बन्धन में पडता है जब कि तीन चौथाई हिस्सा आत्यंतिक उत्कृष्ट अवशिष्ट एवं विनाश रहित है, जो द्युलोंक में स्थित है। एक चौथाई हिस्सा जड एवं चैतन्य के रूप में व्यवस्थित है।[२]

सृष्टि की उत्पत्ति के लिये देवताओं, ऋषिओं एवं साध्यों ने मानस यज्ञ किया। जिसमें पुरुष को बलि के रूप में कल्पित किया। इस यज्ञ में घृत इन्धन एवं हवि के रूप में क्रमश वसन्त, ग्रीष्म व शरद ऋतु बनी।[३] उसमें सत्त्व, रजस् व तमस् को क्रमशः आज्य, इन्धन और हवि के रूप में कल्पित किये। इस यज्ञ में विराट की उत्पत्ति हुई। पशु, पक्षी आदि उस में से उत्पन्न हुए। पुरुष के मुख में से ब्राह्मण, एवं बाहु में से क्षत्रिय, दोनों उरुओं में से वैश्य और दोनों पैरों में से शूद्र उत्पन्न हुए।[४] उस पुरुष के नेत्रों में से सूर्य,

---

१ ऋग्वेद - १०/९०/१

२ ऋग्वेद - १०/९०/३-४

३ ऋग्वेद - १०/९०/६-७

४ ऋग्वेद - १०/९०/१२

मन में से चन्द्र, मुख में से इन्द्र और अग्नि, व प्राण में से वायु उत्पन्न हुए।[५] देवों के निवास के लिए उसके मस्तिष्क में से द्युलोक, नाभि में से अन्तरिक्ष और पैरों में से पृत्वीलोक की उत्पत्ति हुई, ऋक्, यजुष्, सामन् और छन्द्रस् की उत्पत्ति भी उसमें से हुई।

ऋग्वेद के दशवें मंडल का १२वाँ सूक्त **हिरण्यगर्भसूक्त** है। 'कस्मै देवाय हविषा विधेम' ऐसे ध्रुव मन्त्रांश साथ यह सूक्त रचा गया है। युगान्तकाल में सम्पूर्ण सृष्टि को महान जलराशि आवृत्त कर लेती है। उसमें से देवताओं के स्वरूप और बीजभूत स्वरूप में रहे हुए हिरण्यगर्भ (प्रजापति) सृष्टिप्रपंच के लिये अविर्भूत होते हैं। प्रजापति ने अपनी महिमा से सर्वत्र व्याप्त जल को प्रजापति के गर्भ के रूप में धारण कर सके ऐसा बना दिया। सृष्टि की जलराशि को पैदा करने वाल प्रजापति हैं। वे जड और चेतन सबके उत्पादक हैं। प्रजापति सृष्टि को धारण करते हुए उसमें व्याप्त हैं।[६] वर्तमान जगत एवं भूत जगत प्रजापति ने ही व्याप्त किये हैं। उसके आधार पर सूर्य का उदय होता है। वह द्विपद एवं चतुष्पद जीवों का शासक है।[७] प्राणीओं का जन्म व मृत्यु उसके अधिकार में है। उसके प्रभाव से द्युलोक एवं पृथ्वीलोक के स्वामी कंपित होते हैं। विभिन्न दिशाओं और उपदिशाओं पर भी उसका ही आधिपत्य है। वैदिक ऋषि अपनी इच्छापूर्ति के लिए उसको हविष् प्रदान करते हैं।

---

[५] ऋग्वेद - १०/९०/१३

[६] ऋग्वेद - १०/९०/९

[७] ऋग्वेद - १०/१२१/९

ऋग्वेद के दशवें मंडल का १२९वाँ सूक्त **नासदीयसूक्त** है। सृष्टि के रहस्य को समझने के लिए यह सूक्त अहम् है। सृष्टि उत्पत्ति विषयक विविध वादों के बीज भी इस सूक्त में रहे हुए हैं। उसमें कहा गया है किसृष्टि के प्रारंभ में अन्धकार ही था। उस समय में नहीं सत् था, नहीं असत् था, नहीं अन्तरिक्ष था, नहीं व्योम था। किसने उसको आवृत्त कर रखा था?गहन और गंभीर भी वोही था?[11] वहाँ मृत्यु नहीं थी या अमरत्व नहीं था। दिन नहीं था या रात्रि भी नहीं थी। एवं दिन-रात का भेद करनेवाला प्रकाश भी नहीं था। वहाँ एक ही तत्त्व था जो बिना वायु अपनी शक्ति से श्वास लेता था। उसके सिवा वहाँ अन्य कुछ भी नहीं था। तब उसकी महिमा से एकतत्त्व प्रकट हुआ।[८] वह एक मेंसे काम उत्पन्न हुआ। वह सृष्टि का प्रथम बीज था। प्राचीन मनीषीओं ने अपने अन्तःकरण में सोचते हुए असत् में से सत् की उत्पत्ति का आविष्कार किया।[९] क्या सच में कोई जानता है कि वह कौन था? कौन कह सकता है कि सृष्टि कहाँ से हुई कौन जानता है कि कौन कब कहाँ से हुआ? ये सब वो ही जानता है जो परम व्योम में व्याप्त है। या हो सकता है कि वो भी नहीं जानता हो।[१०] ऋग्वेद के ऋषिओं की अलौकिक दार्शनिक विचारधारा का परिचय इन सूक्तों में मिल पाता है।

---

[८] ऋग्वेद - १०/१२१/३, a. सदसदवाद, रजोवाद, व्योमवाद, अपरवाद, आवरणवाद, अम्भोवाद, अमृतवाद, अहोरात्रवाद, देववाद, संशयवाद वगेरे.V.S. Agraval, Sparks From the Vedic Fire'- P. 61-67 तथा वेदरश्मि पारडी - १९६४ - पृ. ६७-७९

[९] ऋग्वेद - १०/१२९/१

[१०] ऋग्वेद - १०/१२९/२

पौराणिक सृष्टिप्रपंच

पुराण के पांच लक्षणों में 'सर्ग' एक प्रमुख लक्षण है। पौराणिक सृष्टि प्रक्रिया सांख्यदर्शन पर आश्रित है। इस विषयमें सांख्यदर्शन का विशेष प्रभाव पुराणों पर पडा है। हालाकि पौराणिक सृष्टि विद्या में पुराणों का अपना-अपना वैशिष्य भी है। वैदिक सृष्टि तत्त्व का प्रभाव यहाँ देखा जाता है। पुराणकालीन सांख्यदर्शन निरीश्वरीय नहीं है, पर सेश्वर है। यहाँ सांख्य एवं वेदान्त का सामंजस्य है। प्रकृति और पुरुष दो तत्त्व भिन्न नहीं है। किन्तु दोनों ब्रह्म द्वारा प्रेरित होते हुए अपने कार्यसम्पादन में समर्थ बनते हैं।यह ब्रह्म का तादात्म्य वैष्णव विष्णु से, शैव शिव से और शाक्त शक्ति से करते हुए प्रत्येक अपने मत को अभीष्ट परमात्मा के साथ उसकी अभिन्नता सिद्ध करते हैं।[११] विष्णुपुराण अनुसार विष्णु के परम उपाधि रहित स्वरूप से प्रधान और पुरुष दो रूप हैं। तृतीय रूप कालात्मक है। कालात्मक रूप द्वारा प्रधान और पुरुष ये दोनों सृष्टिसर्जन के समय पर संयुक्त होते हैं और प्रलय दशा में दोनों वियुक्त बनते हैं। इसतरह, भगवान विष्णु कालशक्ति द्वारा सृष्टि व प्रलय करते हैं।

विष्णोः स्वरूपात् परतो हि ते द्वे रूपे प्रधानं पुरुषश्च विप्र।
तस्यैव तेऽन्येन धृते वियुक्ते रूपान्तरं यद् द्विज कालसंज्ञम्।।[१२]

पहले यह समग्र विश्व भगवान की मायासे ब्रह्मरूप में स्थित था। यह अव्यक्त काल द्वारा भगवानने फिर से अलग रूप में प्रकट किया। विश्व के इस सृष्टितत्त्व का ब्यौरा विष्णुपुराण (१/२-५) वायुपुराण (३ से ६ अध्याय),

---

[११] ऋग्वेद - १०/१२९/३

[१२] ऋग्वेद - १०/१२९/४

नारदीय पुराण (१०-४२) मार्कण्डेयपुराण (४७-४८), भविष्यपुराण (२/५-६, ३/५-१०) आदि में है। पुराणों में यह सृष्टि के प्रमुख तीन सर्ग हैं (१) प्राकृत सर्ग (२) वैकृत सर्ग और (३) प्राकृत-वैकृत सर्ग। प्राकृत सर्ग अबुद्धि से होता है यानि कि उसकी सृष्टि नैसर्गिक स्वरूप में होती है। उसके लिये ब्रह्माने अपनी वृद्धि कार्यरूप में लाने की जरुरत नहीं है। वैकृतसर्ग बुद्धिपूर्वक होता है।

प्राकृताश्च त्रये पूर्वे सर्गास्तेऽबुद्धिपूर्वकाः।
बुद्धिपूर्वं प्रवर्तन्ते मुख्याद्याः पञ्च वैकृताः।[17]

प्राकृतसर्ग तीन हैं (१) ब्रह्मसर्ग (२) भूतसर्ग ९३) वैकारिकसर्ग। वैकारिकसर्ग पांच हैं (१) मुख्य सर्गः (२) तिर्थक् सर्गः (३) देवसर्गः (४) मानुससर्गः (५) अनुग्रहसर्गः। और प्राकृत वैकृत सर्ग कौमारसर्ग है। इस तरह समग्रतया नव सर्ग पुराणों में है। किन्तु श्रीमद् भागवत में दश सर्ग दर्शाये गये हैं (३/१०/१८)। पुराणों की सृष्टि प्रक्रिया का अवलोकन करने से देखा जा सकता है कि पुराणों की दृष्टि समन्वयवादी है। प्रधान सृष्टि तो ब्रह्माजी का कार्य है। उनको प्रेरणा विष्णु द्वारा मिलती है। विष्णु के नाभिकमल में ब्रह्माजी का निवास है। सो साल की तपस्या के फलस्वरूप उनको सृष्टिकार्य की योग्यता प्राप्त होती है। शिव-पुराणों में शिव की प्रेरणा से यह कार्य दर्शाया गया है। इसमें रुद्र का कार्य भी अनिवार्य माना गया है। नारी स्वरूप होने से अपने नर-नारी ऐसे प्रभाग करते हुए मानवसृष्टि सर्जित करते हैं।[१३] सांख्य का आधार लेने के बाद भी पौराणिक सृष्टि अपनी मौलिकता से सुशोभित है।

---

[१३] ऋग्वेद - १०/१२९/६-७

दर्शनशास्त्रों में सृष्टिप्रपंच

दर्शनशास्त्रों ने भिन्न भिन्न दृष्टिकोण से संसार-जडवर्ग की सत्ता का स्वीकार किया है। चार्वाक के अनुसार जड पदार्थ ही संसार का मूल कारण है। पृथ्वी, जल, अग्नि एवं वायु के परमाणु ही संसार को निर्मित करते हैं। बौद्धों चार्वाक की तरह ही आकाश को तत्त्व नहीं मानते हैं किन्तु चार्वाक संमत परमाणु में अवयव मानते हैं। यह अवयव का प्रवाह संसार का निर्माण करता है। जैन लौगो को आकाश तत्त्व मान्य है। वे एक तरह परमाणुओं को ही सृष्टि के मूल कारण के रूप में स्वीकारते हैं। न्याय-वैशेषिक दर्शनों में सूर्यकिरणों में उडनेवाले धूलिकणों के अवयवों को परमाणु कहते हैं। परमाणु के संयोग से द्वयणुक बनता है। तीन द्वयाणुकों के मिलने से त्र्यणुक बनता है जो सूर्यकिरणों में धूलि के स्वरूप में दिखते हैं। इस क्रम से सृष्टि का निर्माण होता है। यह परमाणु नित्य है। वैयाकरण एवं मीमांसक परमाणु को अनित्य मानते हैं। वे केवल शब्द की नित्यता का स्वीकार करते हुए केवल शब्द की नित्यता स्वीकार करते हुए शब्द को ही सृष्टि का मूल कारण मानते हैं।[१४]

वेदान्तीओं ईश्वर, वेद का श्रुतरूप एवं सृष्टिचक्र को स्वीकारते हैं। सब वेदान्तीओं की पद्धति सांख्यमत जैसी है फिर भी कुछ विगतों में भेद है। सृष्टिचक्र अनुसार समग्र जड पदार्थों आकाश नामक मूल सत्ता से पैदा होते हैं। गुरुत्वाकर्षण, आकर्षण या विकर्षण जैसी सभी शक्तियाँ आदिशक्ति के प्राण से आविभूत हुई है। आकाश में प्राण का प्रभाव पडने से विश्व का सर्जन होता है। सृष्टि के प्रारंभ में आकाश, स्थिर एवं अव्यक्त था। जैसे-

---

[१४] पुराणविमर्श, आचार्य बलदेव उपाध्याय, परिच्छेद - ७. पृ. २७५

जैसे प्राण उसमें क्रियाशील हुआ, वैसे-वैसे स्थूल पदार्थ वृक्ष, पशु, पक्षी, मनुष्य आदि उत्पन्न हुए। समय व्यतीत होने के बाद सृष्टिविकास पूर्ण होते हुए प्रलय का प्रारम्भ हुआ। सभी पदार्थ सूक्ष्मतम होते हुए मूल आकाश और प्राण में परिवर्तित होते फिर नया सृष्टिचक्र चलता है। आकाश और प्राण उपर की सत्ता महत् है। महत् आकाश और प्राण का स्वरूप ग्रहण करता है।

सांख्य अनुसार मन की प्रतिक्रियात्मक शक्ति का नाम बुद्धि है। वह महत् से जन्म लेती है महत् से पर अव्यक्त है। इस अवस्था में मन नहीं होता। केवल उसका कारण होता है। सत् की इस अवस्था को प्रकृति कहा जाता है। प्रकृति से पुरुष भिन्न है। वह सांख्य अनुसार आत्मा है। वह निर्गुण, स्वव्यापी एवं दृष्टा है कर्ता नहीं। वेदान्तीओं पुरुष-प्रकृति को भिन्न नहीं समझते हैं। सांख्य के पुरुष की तरह वेदान्त में ईश्वर की कल्पना है। सांख्य और वेदान्त शाश्वत पुरुष में मानते हैं। भेद यह है कि सांख्य पुरुष बहुत्व में मानता नहीं। वेदान्त अनुसार आत्मा एक है। किन्तु अनेक जैसा प्रतिभासित होता है।

द्वैतवादीओं आत्मा या ईश्वर को संसार का कारण नहीं, किन्तु उपादान कारण मानते हैं। वे ईश्वर, आत्मा एवं प्रकृति ये तीनों की सत्ता का स्वीकार करते हैं। अद्वैतवादीओं के अनुसार समग्र विश्व एक है। एक ही सत् विविध रूपों में प्रतिभासित होता है। उनके मतानुसार माया जगत् का कारण है। ईशावास्योपनिषद् भी विद्या एवं अविद्या का उल्लेख करता है। किन्तु यहाँ माया और अविद्या पर्याय नहीं है।

श्रीकृष्णमणिशर्मसूरी प्रणीत आनंदसागर में सृष्टिप्रपंचः-

मूर्धन्य विद्वान् पंडित श्री कृष्णमणिशर्मसूरी रचित आनंदसागर नामक ग्रन्थ श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म के सिद्धांतों का निरूपण बहुत ही सरलता से करता है। आठ तरंगों में विभाजित इस ग्रन्थमें सृष्टि पूर्व की बात करते हुए, सृष्टिप्रपंच का निरूपण वेद, पुराण एवं दर्शनों के तहत दार्शनिक विचारों के साथ किया गया है। पर ब्रह्म परमात्मा दिव्य परमधाम में लीलाएँ करता है और इस जगत में आकर व्रज, रास आदि, लीलायें किस तरह करता है, उसका वर्णन है। यह वर्णन वेद, पुराण और सांख्य-वेदांत जैसे दर्शनों से प्रभावित है। फिर भी भेद है। इस ग्रन्थ में की गई सृष्टिप्रक्रिया की प्रायोजना कैसी है, उसका विचार यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

सृष्टि का महाकारण

सृष्टि का मुख्य कारण पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री कृष्ण है। वे अक्षरब्रह्म से पर हैं।[१५] अक्षरब्रह्म यह प्रेमविहारी परमात्मा का अंगभूत है जो प्रकृति से पर और अव्यक्त है। बालक्रीडा की तरह उनकी लीलामात्र से अनंतकोटि ब्रह्माण्डों उत्पन्न हुए हैं।[१६] तब सत्, असत्, मूल प्रकृति, महत्, अहंकार एवं सत्व, रजस् व तमस् नहीं थे।[१७] आकाश, वायु, जल तथा भूमि भी नहीं थे। ब्रह्मांड तथा जरायुज आदि जीव भी नहीं थे।[१८] तब अक्षरातीत यह पूर्णब्रह्म परमात्मा की पास अक्षरब्रह्म आते-जाते थे। एक बार दर्शन पर

---

[१५] विष्णुपुराणम् - १/२/२४

[१६] शिवपुराणम् - १/१२/१८

[१७] पुराणविमर्श, आचार्य बलदेव उपाध्याय, परिच्छेद - ७/ पृ. २७५.

[१८] सर्वदर्शनसंग्रहः, पृ.३४

गये हुए अक्षरब्रह्म को सखीगण से युक्त ऐसे किशोर स्वरूप वाले परमात्मा के दर्शन हुए।[१९] अक्षरब्रह्मने परमात्मा के वैभव देखने की इच्छा से तपका प्रारंभकिया। तप से दयालु परमात्माने प्रसन्न होते हुए, अक्षरब्रह्म के मनोरथ पूर्णकरने की और लक्ष दिया। क्योंकि परमात्मा के लक्ष में लेने मात्र से सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं। **यस्य स्वार्थ सिद्धतत्क्षणात्।**[२०] परमात्मा की प्रेरणा से उनके गणने लीला को देखने की लिये व्याकुलचित्त वाले अक्षरब्रह्म को देखा।[२१] कभी नहीं देखे ऐसे पुरुष को एवं नहीं देखे एसे उनको (परमात्मा को) देखते हुए विस्मित सखीओं ने उसके बारे में प्रियतम को पूछा- है स्वामी, हे प्राणपति, इससे हम आपको पूछते हैं कि यह सुन्द्रर पुरुष कौन है? वह कहाँ रहता हैं? एवं क्या करता है?ये हमें कहें।[२२] इसके प्रत्युत्तर में परमात्मा ने कहा- यमुना तटपर निवास करने वाले ये अक्षरपुरुष हैं। जो एक निमेष जितने काल में असंख्य विश्वों को बालक्रीडा की तरह उत्पन्न करते हैं।[२३] तब परमात्मा की इन सखीयों ने दुःखात्मक जगत देखने की इच्छा प्रकट की।

विश्वेऽस्मिन् कीदृशं दुःखं जाऽयासत्वे तथा कथम् ।
न जानीमो वयं स्वामिन्नतो दर्शय दुःखताम् ।।[२४]

---

[१९] आनन्दसागरः, १/१

[२०] आनन्दसागरः, १/१

[२१] वही, १/३

[२२] वही, १/४

[२३] वही, १/५

[२४] वही, १/१०

परमात्माने उनको समझाया कि यह जगत जरा-मरण आदि से दुःखरूप है। अहंकार से युक्त ऐसे जगत में आपका जाना ठीक नहीं है। आप अपने मूलस्वरूप को भूल कर वेह बुद्धि के ज्ञान वाली बन जाओगी। पुत्र, कलत्र आदि के ममत्व से चित्त व्याकुल हो जायेगा। और प्राण से भी प्रिय ऐसे मुजे भी भूल जाओगे।[२५] मुझे भूल कर तुम मेरी पत्थर की कृत्रिम मूर्तिओं की पूजा करोंगे। वही साक्षात् ईश्वर है ऐसा तुम परस्पर करोगे। इस तरह कर्मकांड में प्रवृत्त रहते हुए तुम जन्म-मरण के बन्धन में भटकते रहोगे।

नानापाखण्डधर्मेषु यथा संसारिणो जनाः।
गुरुकर्मपरा यूयं भ्रमिष्यथ यतस्ततः।।[२६]

सद्गुरु बनकर मैं उपदेश दूँगा फिर भी तुम उसे इस कर नगण्य करोगे। असत् रूप जगत का यह दृश्यतुमको पहले पहले अमृत जैसा मधुर लगेगा। परिणामतः विष से भी ज्यादा भयावह लगेगा।[२७] परमात्मा के नहीं बोलने पर भी सखीगण ने तीन बार यह खेल देखने की इच्छा प्रकट की। इस तरह, अक्षर और सखीगण दोनों के मनोरथ पूर्ण करने के लिये अक्षरातीत परमात्मा ने निर्णय किया।[२८]

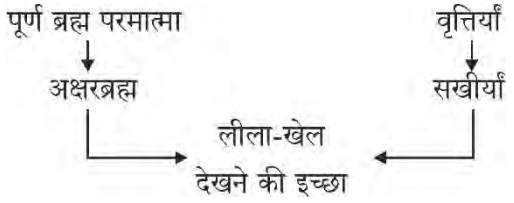

[२५] वही, १/११
[२६] वही, १/२०
[२७] वही, १/१७-२
[२८] वही, १/२०

सृष्टि का प्रपंच

अक्षरब्रह्म और सखीओंके खेल देखने की इच्छा अथातो ब्रह्मजिज्ञासा की तरह अथातो सृष्टिजिज्ञासा है। इन दोनों के मनोरथों को पूर्ण करने का परमात्माने विचार किया कि तुरन्त ही अक्षरब्रह्म के हृदय में से सुमंगला नामक शक्ति उत्पन्न हुई जिसने परमात्मा श्री कृष्ण की प्रेरणा से मोहरूपी निद्रा को उत्पन्न किया।

तावत्कूटस्थहृदयात्प्रादुर्भूता सुमङ्गला।
श्रीकृष्णप्रेरिता सा तु निद्रामजनि मोहिनीम्।।[२९]

यह मोहरूपी निद्रा की दो शक्तियाँ है- विक्षेप एवं आवरण। जिसमें विक्षेपशक्ति से मन में भ्रम उत्पन्न होता है और आवरणशक्ति से ज्ञान आवृत्त हो जाता है।[३०] आवरण शक्ति द्वारा ज्ञान के बिना हो जाने के बाद विक्षेपशक्ति द्वारा महामोहनी उत्पन्न हुई- 'आवृत्या ज्ञानरहित महामोहस्तदाडभवत।'[३१] वेदों में कहा गया है कि विद्या और अविद्या नामक दो शक्तियाँ अक्षरब्रह्म में छुपकर बैठी हुई है। अतः चिन्मय ज्ञानधन और पूर्ण ऐसे अक्षरब्रह्म में अज्ञान उत्पन्न हुआ। इस लिये यहाँ किसी को शंका नहीं करनी चाहिए।[३२] क्योंकि सभी प्रमाणों में शब्दप्रमाण प्रमुख होने से अक्षरब्रह्म को मोह होना संभवित है।[३३] ब्रह्मणि अज्ञो (ब्रह्मव्यज्ञो) 'नास्तित्क

---

[२९] वही, १/२६
[३०] वही, १/२९
[३१] वही, १/३३
[३२] वही, १/३५
[३३] वही, २/१

उच्यते'।[३४] इस तरह अक्षरब्रह्म का मन अहंकार बनकर मोहरूपी जलमें तैरने लगा। जोहिरण्यगर्भ की तहत जाना गया जो सृष्टि के आदि में होने से स्वर्गलोक रहित पृथ्वी को धारण करनेवाले प्राणीमात्र के स्वामी ईश्वर कहलाते है।[३५] हजारों साल बीत जाने के बाद मोहरूपी जल में सोये हुए अंड को ईश्वर ने जागृत किया।[३६] जिसमें से जागृत हुए, पुरुष नारायण कहे गये। अक्षरपुरुष 'ना' कहलाये 'ना' में से उत्पन्न हुआ मोहनिद्रारूपी जल 'नार' कहलाते हैं। इस नार में जिनका अयनस्थान है वे पुरुष नारायण कहलाते हैं।[३७] **'आपो नाराः'** ऐसा मनु भी कहते हैं। ये नारायण ही सृष्टि के आद्यद-एवं प्रणव हैं। उन्होंने ऐसी इच्छा व्यक्त की कि मैं अकेला हूँ इस लिए अनेकरूप से बनु'**अहमेवास्मि नान्यऽस्ति बहुस्वामीत्यमन्यता**।[३८]

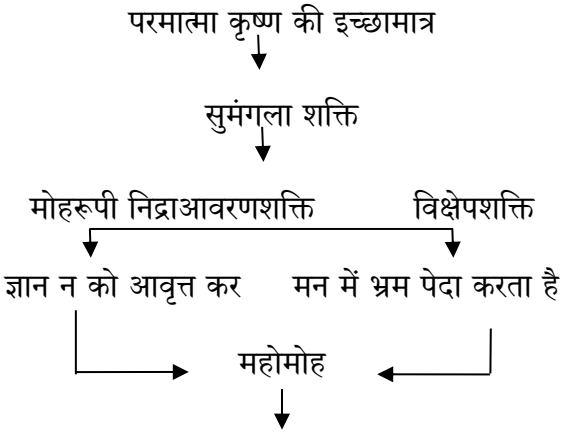

[३४] वही, २/१
[३५] वही, २/३
[३६] वही, २/४
[३७] वही, २/१२
[३८] वही, २/१३

अक्षरब्रह्म का मन अंडाकार बन कर

↓

हिरण्यगर्भ

↓

ईश्वर

↓

नारायण

↓

अनेक होने की इच्छा

नारायण की अनेक होनेकी इच्छा में से अहंकार का जन्म हुआ। राजस्, तामस् एवं सात्त्विक ऐसा तीन प्रकार का हुआ है। उसमें राजस् अहंकार में से ज्ञानेन्द्रियाँ एवं कर्मेन्द्रियाँ उत्पन्न हुई। क्षोत्र, त्वचा, रसना, चक्षु एवं प्राण ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ है। वाणी, दो हाथ, वो पाँव, गुदा एवं उपस्थ ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ है।[३९] दश इन्द्रियों का हरेक का आयाम, अधिभूत और अधिदेव ऐसे तीन प्रकार के भेद गीना जा सकते है। उसमें क्षोत्रादि इन्द्रियाँ अद्यात्म कहलाते हैं। दोनों से अभिन्न रहते हुए अधिष्ठाता देव रहे वे अधिदेव कहलाते है।[४०]

अद्यात्म		**अधिभूत**		**अधिदैव**
क्षोत्र	→	शब्द	→	दिशा

[३९] वही, २/१६

[४०] वही, २/१७

त्वचा	→	स्पर्श	→	वायु
चक्षु	→	रूप	→	सूर्य
रसना	→	रस	→	वरुण
घ्राण	→	गन्ध	→	भूमि
वाक्	→	वक्तव्य	→	अग्नि
पाणी	→	उपादेश	→	इन्द्र
पाद	→	गन्तव्य	→	उपेन्द्र (विष्णु)
पायु	→	मलोत्सर्ग	→	यम
उपस्थ	→	आनन्द	→	प्रजापति

तामस् अन्धकार मेंसे पाँच तन्मात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गन्ध) सहित पांच तत्त्व (आकाश, वायु, तेज, जल और पृत्वी) पेदा हुए हैं।[४१] सात्त्विक अहंकार में से मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार ये चार अन्तःकरण प्रकट हुए।[४२] इस तरह दश इन्द्रियाँ एवं चार अन्तःकरण मिलकर कुल चतुर्दश कहलाते हैं। उसमें संकल्प-विकल्प करना मनका स्वरूप है। (संकल्पकं मनोरूपम्), निश्चय करना, यह बुद्धि का स्वरूप है। (बुद्धिरूपं तु निश्चयम्), चिंतन करना यह चित्त का काम है। (चित्तस्यापि अनुसंधानम्) और अहंबुद्धि करना यह अहंकार स्वरूप है। (अभिमानोंडस्त्यहंकृतः)। मन

[४१] वही, २/१९

[४२] वही, २/२१

के देव चन्द्र हैं, बुद्धि के बृहस्पति, चित्त के वासुदेव एवं अहंकार के देव रुद्र है।[४३] क्षोत्रादि पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, वाक् आदि पांच कर्मेन्द्रियाँ एवं मन आदि चार अन्तःकरण ये चतुर्दश के देव सात्त्विक अहंकार में से प्रकट हुए।[४४]

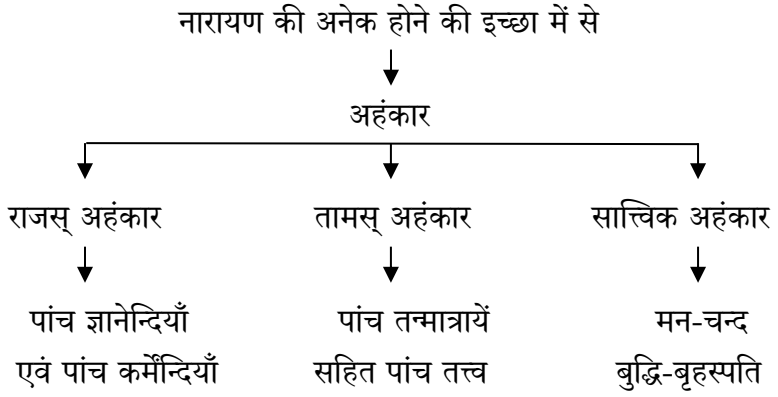

चित्त-वासुदेवउसके बाद पंचीकरण प्राप्त महाभूत स्थूलरूप का सर्जन करते हैं।[४५] पंचीकरण अर्थात् प्रत्येक तत्त्वके दो प्रभागकरके, एक प्रभाग को अकबंध रखते हुए, शेष प्रभाग के द्वारा समान प्रभाग करके, उसमें से एक एक प्रभाग निकाल कर पांचों तत्त्वों के अर्ध भाग के साथ मिलाना। जैसे कि-१/२ पृत्वी +१/८ आकाश + वायु+१/८ जल १/८ तेज=१ इस तरह, अक्षरब्रह्म की इच्छानुसार नारायण द्वारा समष्टिरूप ब्रह्माण्ड हुआ वो ही विराट कहलाता है।

---

[४३] वही, २/२२

[४४] वही, २/२३-२४

[४५] वही, २/२५-२७

इत्थं समष्टिब्रह्माण्डं जातं नारायणाभिधात् ।
अक्षरेच्छानुसारेण विराडित्यभिधीयते ।।[४६]

विराट की रचना करके नरायण ने ज्ञानांश के अधिकरूप से उसमें प्रवृत्त किया। शुद्ध सत्त्वप्रदान माया के प्रसंग को लेकर वे ईश्वर कहलाये। वही आदि पुरुष ने अविद्या का आश्रय लेकर अल्पज्ञ जीव रूप में विभिन्न शरीर में प्रवेश किया।[४७] ये ईश्वर करुणोपाधि तथा अन्तर्यामी होने से सभी जीवों को अपने-अपने कार्यो में प्रवृत्त करते हैं। कार्योपाधि जीव ईश्वर की आज्ञा को वश होते हुए अपने कर्मों में अधीन होकर, विविध योनिओं में भ्रमण करता हुआ कर्मकल का भुगतान करता है।[४८] जीव और ईश्वर दोनों सजातीय मित्रों की तरह ब्रह्माण्डरुपी वृक्ष पर रहनेवाले हैं। उनमें से एक जीवात्मा वृक्ष से कर्म में से उत्पन्न सुख-दुःख रूपीफल का भोग करता है। जब कि दूसरा परमात्मा भोग न करते हुये केवल प्रकाशमान साक्षीरूप से रहता है।

द्वौ सख्यायावेकतरौ तिष्ठन्तौ सहजावमू।
तयोरेकः कर्मफलं भुङ्क्ते भात्यपरोऽनदन् ।।[४९]

जिस तरह पंचीकृत तत्त्वों में से स्थूल शरीर का निर्माण होता है उसी तरह अपंचीकृत पांच तत्त्वों में से सूक्ष्म तथा कारण शरीर की रचना होती है एवं महाकारण खुद चेतन रहता है। इस तरह चेतन आत्मा के तीन प्रकार के

---

[४६] वही, २/२८-२९
[४७] वही, २/३०
[४८] वही, २/३५
[४९] वही, २/३६

शरीर (रूप) है। उपर्युक्त चार रुपों वाले शुद्ध चेतन तत्त्व की जाग्रत स्वप्न, सुषुप्ति, एवं तुर्या ये चार आवस्थाएँ कही गई हैं।[५०]

पंचीकरण महाभूत मे से सृष्टि

क्षोत्र आदि इन्द्रियाँ शब्द आदि अपने-अपने विषयों को ग्रहण करती हैवह अवस्था जाग्रत है।[५१] जाग्रत अवस्था में इन्द्रियों द्वारा मन के संयोग द्वारा देखा हुआ, सुना हुआ जिस तरह-प्रत्यक्ष अनुभव होता है उस तरह इन्द्रियाँ सुप्त होते, अकेले मन द्वारा जो अनुभव प्रतीत होता है वह स्वप्नावस्था है।[५२] मुझे मालूम नहीं, मैं तो आराम से सोता था उस प्रकार घोर निद्रा सुषुप्ति

---

[५०] वही, २/३७

[५१] वही, २/३८

[५२] वही, २/३९-४०

अवस्था है।[५३] तीन अवस्थाओं से भिन्न तुर्यावस्था है। उसमें जाग्रत अवस्था में रहा हुआ विश्वाभिमान करनेवाला विराट् पुरुष स्थूलरूप है। वह स्थावर एवं जंगम विश्व का कारण है। स्वप्नावस्था में रहे हुए तेजस्-अभिमान करनेवाला स्थूलजगत् के कारणरूप नारायण रूप से जो साक्षी रहे हुए है वो ही अक्षरब्रह्म हैं।[५४] स्थूल एवं सूक्ष्मरूप कारणरूप जो अनिर्वचनीयविद्या है वह सुषुप्ति अवस्था कहलाती है वह अभिमानी प्राज्ञ कहलाती है।[५५] अविद्या, ब्रह्मलोक, महामोह, अज्ञान, यज्ञप्रकृति, निद्रा, भ्रान्ति आदि अनिर्वचनीय ऐसी अविद्या के ही पर्याय शब्द हैं।[५६] तुर्यावस्था को ब्रह्माभिमानी महाकारण रहता है। वो ही अक्षरब्रह्म से प्रादुर्भूत हुई सुमंगला नामक शक्ति है। वो ही समस्त प्रपंचरूप विश्व का महाकारण है।[५७] इस तरह महाकारण, कारण, सूक्ष्म एवं स्थूल यह समष्टि व व्यष्टिरूप ब्रह्माण्ड अक्षरब्रह्म के हृदयाकाश में रहता है।

स्वप्न को देखते हुए, अक्षरपुरुष ने यह स्वप्न के जगत् को देखा स्वप्न पश्यन्नक्षरस्तुददर्श स्वाप्निकं जगत्। उसमें भू, भुव, स्वर्ग, मह, जन, तप एवं सत्य ये सात उर्ध्वलोक और अतल, वितल, तलातल, महातल, रसातल एवं पाताल ये सात अधोलोक आये हुए हैं।[५८]

---

[५३] वही, २/४१-४२

[५४] वही, २/४३

[५५] वही, २/६०-६१

[५६] वही, २/६२

[५७] वही, २/६३

[५८] वही, २/६४

यह स्वप्न जगत् में ब्रह्मा विष्णु आदि देवों, गन्धर्वों, किन्नरों, सनत्कुमारों, भृगु, वशिष्ट आदि ऋषिगण देखे गये।[५९] सूर्य, चन्द्र आदि ग्रह, वासुकी आदि नाग, इन्द्रादि लोकपालों, ऐरावत्यादि दिग्गजों, विद्युत्, वज्रपात, बादल, मरुतगण, क्षीरसागरादि सात समुद्र, सुमेरु आदि आठ पर्वत, जम्बु आदि सात द्वीप, गंगा आदि सहस्र नदियाँ, नव खण्डो की सीमा करनेवाले लोकालोक पर्वत आदि दिखाई दिये।[६०] चार वर्णों, चार आश्रम, अंडज, पिंडज, स्वदेज, उद्भिज ये सब देखे। इस तरह अक्षरब्रह्मने चोरासी लाख योनिओं के प्राणीओं का सर्जन किया।[६१] चौदलोक के बीच में जम्बू आदि सातद्वीप हैं। (जम्बू, प्लक्ष, शाल्मली, कुश, कौंच, शाक एवं पुष्कर)। जम्बूद्वीप में भारत आदि नववर्ष हैं। (भारत, इला, किंपुरुष, भद्राक्ष, केतुमालु, हरिवर्ष, हरिण्य, रम्यवर्ष एवंकुश)[६२] वहाँ भारतखण्ड में मध्य में मथुरा में परब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्ण के चरण में दृढ पीतियुक्त अक्षरब्रह्म की लीला देखने की इच्छा की हठवाली सखीओं पर परमात्माने मायारूपी शक्ति का पडदा रखा।[६३] माया के आवरण से उनके चित्त की वृत्तियाँ- सखियाँ अक्षरब्रह्म के स्वप्नरूपी जगत् में प्रकट हुई भूलोक के बीच में भारतवर्ष के व्रजमंडल में गोपीओंके रूप में प्रकट होकर अक्षर ब्रह्म की जो वृत्ति ने पूर्णब्रह्म परमात्मा की किशोरलीला की इच्छा करते हुए तप शुरु किया था

---

[५९] वही, २/६७

[६०] वही, २/६८

[६१] वही, ३/६९

[६२] वही, ३/७०

[६३] वही, ३/१

वह वृत्ति श्री पुरुषोत्तम परमात्मा श्रीकृष्ण के आवेश के साथ नन्दपुत्र रूप में प्रकट हुई।

अक्षरपुरुष का स्वप्न
↓
सात उर्ध्वलोक और सात अधोलोक
↓
देव, ऋषिगण, सूर्य, चंद्र, नाग, लोकपाल, सात समुद्र, सात द्वीप, आठपर्वत, नवखंड, चार वर्ण, चार आश्रम, चोरासी लाख योनियाँ
↓
बीच का भूलोक है (जम्बू आदि सात द्वीप)
↓
भारत वर्ष (मध्य में) (नव वर्ष)
↓
मथुरा
↓
व्रज

समीक्षा

- ३५ श्लोक के प्रथम तरंग में वैदिक व पौराणिक रीति से सृष्टि के मूल कारण की चर्चा प्रस्तुत की गई है। सृष्टि के मूल महाकारण परम परमात्मा कृष्ण है। वहाँ अक्षरब्रह्म एवं सखीगण की जिज्ञासासृष्टि के आविर्भाव का मूल कारण है। उसको 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' की बरह 'अथातों' 'सृष्टिजिज्ञासा' कह सकते हैं।
- यहाँ वेद के नासदीयसूक्त का प्रभाव देखा जा सकता है। देखिये नासदीय सूक्त का मन्त्र 'नासदीसन्नो' रुद्रासीत्तदानी नासीद्रजों को व्योमा

परीयत्' (ऋग्वेद- १०/१२९/१) ऐसा श्लोक यहाँ भी देखे'परा नाऽऽसीन्महानहकारो न सत्त्वं न रजस्तमः।।

- आनंदसागर के सृष्टिप्रपंच में सांख्य और वेदान्त ये दोनों दर्शनों का समन्वय वेददृष्टिकोण से दिखता है। सुमंगलाशक्ति में से मोहरूपी निद्रा एवं उसका आवरण तथा विक्षेपशक्ति की चर्चा, पंचतत्त्वों के एकीकरण का सिद्धांत, वेदांत प्रेरित लगता है। स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीर, तथा उनकी अवस्थाओं की चर्चा भी वेदान्तीओं के जैसी ही है। एक मेंसे अनेक होने की बात सांख्य के पुरुषबहुत्व के सिद्धांत के साथ साम्यता रखती है। पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ, अन्तःकरण, तन्मात्राओं की उत्पत्तिभी सांख्यदर्शन अनुसार ही है। जिसमें विविध देवताओं की कल्पना स्वतंत्र दिखती है।
- विराट् पुरुष अक्षरपुरुष हिरण्यगर्भ आदि के निर्देश एवं अक्षरपुरुष के स्वप्न में देखे गये सात उर्ध्वलोक, सात अधोलोक, सूर्य, चन्द्र, नाग, दिग्गजों, सात द्वीप, नववर्ष, चार वर्ण, चार आश्रम आदि का जो प्रपंच दर्शाया गया है, वह पुरुषसूक्त के विराट् पुरुष का विस्तार है एसी प्रतीति होती है।
- आनंदसागर के सृष्टिप्रपंच के दार्शनिक विचार पुरुषसूक्त, नासदीयसूक्त, हिरण्यगर्भ सूक्त जैसे दार्शनिक सूक्तों की पौराणिक सर्गप्रक्रिया से एवं दर्शनशास्त्रों की संसार निर्माण से प्रभावित होने पर भी अक्षरब्रह्म की सुमंगला शक्ति का यह प्रपंच एक अलग ऐसे प्रणामी दर्शन की प्रतीति करवाता है।
- सांख्य एवं वेदान्त दर्शन के कुछ शब्द या तत्त्वों के स्वीकार करने मात्र से यह सांख्य या वेदांत दर्शन जैसा है ऐसा सिद्ध करना अयोग्य

है, क्योंकि परम परमात्मा श्री कृष्ण की अखिलाई दर्शानेवाला एक स्वतंत्र एवं अनोखा दर्शन है।

- निष्कर्ष यह है कि आनन्दसागर की सृष्टिप्रक्रिया वेद के आध्यात्मिक दार्शनिक विचारों के साथ सांख्य वेदान्त जैसे दर्शनों के सृष्टिविषयक विचारों का समन्वय करके इस युग की मांग के अनुसार पौराणिक अध्यात्मवादी दृष्टिकोण रखकर अपना स्वतंत्र सिद्धांत स्थापित करके भिन्न दर्शन प्रस्तुत करता है। जिसका महाकारण परम परमात्मा भगवान श्री कृष्ण के स्वरूप ऐसे अक्षरब्रह्म को मानता है।

संदर्भग्रंथ

१. ऋक्-सूक्तमञ्जूषा- प्रो. महावीर, सत्यम् पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली- ११००५९

२. वैदिक साहित्य एवं संस्कृत- डॉ. गौतम पटेल, युनिवर्सिटी ग्रन्थनिर्माण बोर्ड, गुजरात राज्य, अहमदाबाद-६ (गुजराती में)

३. माधवाचार्यकृत सर्वदर्शनसंग्रहः, प्रो. उमाशंकरशर्मा ऋषि, चौखम्बा विद्याभवन-वाराणसी-२२९०७

४. तर्क, संग्रह, डॉ. लक्ष्मेश जोषी, पार्श्व प्रकाशन, अहमदाबाद (गुजराती में)

५. आनंदसागर- पं. श्री कृष्णुमणिशर्मसूरी प्रणीत, प्रकाशक - थी ५, नवतनपुरी धाम, जामनगर, गुजरात। (गुजराती में)

६. पुराणविमर्श, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

७. नवीनवैदिकसञ्चयनम्-डॉ. जमुनापाठक एवं डॉ. उमेश प्रसादसिंह, चौखम्बा कृष्णदास-अकादमी, वाराणसी।

८. श्रीमद्भागवतपुराणम्- गीताप्रेस गोरखपुर।

९. विष्णुपुराणम्-गीताप्रेस, गोरखपुर।

१०. शिवपुराणम्-गीताप्रेस गोरखपुर।

सांख्यदर्शन में प्रकृति-पुरुष निरूपण।

डॉ. हेमु महेश राठोड
एन. एस. पटेल आर्ट्स कॉलेज,
आणन्द, गुजरात।

प्रत्येक मनुष्य विवेकप्रधान होता है। इसी कारणवश वह प्रत्येक अवसर पर अपनी विचार-शक्ति का प्रयोग करता है। प्रत्येक मानव दृश्यादृश्य जगत्-विषयक कतिपय श्रद्धाओं, विचारो तथा कल्पनाओं का एक समुदाय है। निखिल मानवीय कार्यविधानों की आधारशिला मानवीय विचार है। श्रीमद्भगद्गीता में भी कहा है-

सत्त्वारूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥[१]

अर्थात् सभी मनुष्यों की अपनी-अपनी श्रद्धा सत्त्व के अनुरूप होती है। उसकी श्रद्धा के अनुरूप वे होते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य का अपनी श्रद्धानुरूप 'दर्शन' होता है। चाहे वह उसे जाने-माने या न जाने-माने। इसी तरह दर्शन हमारे जीवन के साथ अनिवार्यरूप से जुड़ा हुआ है। उसे हम अपने जीवन से पृथक् नही कर सकते। अगर हमारे जीवन में दर्शन नही रहेंगे तो हमारा जीवन मनुष्य जीवन न रह कर पशु जीवन बन जायेगा। इसीलिये तो मनुष्यजीवन का सब से बड़ा वैशिष्ट्य धर्माचरण युक्त जीवन है। मनुष्य अर्थात् धर्मधारण करनेवाला जीव, उसका विवेक-विचार। सामान्य अर्थ में उसी को ही दर्शन कहते हैं। दर्शन शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार है- दृश्यते इति दर्शनम्। अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाय वो दर्शन। दर्शन का मुख्य ध्येय है- कौन पदार्थ देखा जाय? वस्तु का तात्त्विक स्वरूप क्या है? इस की उत्पत्ति कहाँ से शुरु हुई? इस सृष्टि का कारण कौन है? ये

[१] श्रीमद्भगवद् गीता १७.३